International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

गोविन्द मिश्र के साहित्य में सामाजिक यथार्थ

निकिता पांडे[1], डॉ. निधि वर्मा[2]

[1]शोधार्थी, भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)
[2]शोध निर्देशक, सहायक प्राध्यापिका (हिंदी विभाग), भारती विश्वविद्यालय, दुर्ग (छ.ग.)

सारांश

यह शोधपत्र समकालीन हिंदी साहित्य के प्रमुख कथाकार गोविन्द मिश्र के साहित्य में निहित सामाजिक यथार्थ के विविध पक्षों का विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। गोविन्द मिश्र के उपन्यासों और कहानियों में भारतीय समाज की जटिल संरचना, वर्गीय अंतर्विरोध, स्त्री जीवन की पीड़ा, ग्रामीण-शहरी संघर्ष, सांस्कृतिक संक्रमण तथा मध्यमवर्गीय मानसिकता के द्वंद्व को सूक्ष्मता से उकेरा गया है।

उनकी रचनाएँ केवल सामाजिक विडंबनाओं की अभिव्यक्ति नहीं करतीं, बल्कि उन विडंबनाओं के कारणों की तह में जाकर मानवीय संवेदना और मूल्य-बोध के स्तर पर पाठकों को झकझोरती हैं। यह शोधपत्र गोविन्द मिश्र के प्रमुख उपन्यासों — *कई चाँद थे सरे-आसमान, पार जल में, अहेर, धीर समान चुप* — के माध्यम से यह स्पष्ट करता है कि लेखक ने किस प्रकार समाज में व्याप्त विसंगतियों और मूल्यों के क्षरण को चित्रित करते हुए साहित्य को सामाजिक विमर्श का एक सशक्त माध्यम बनाया है।

इस अध्ययन का उद्देश्य गोविन्द मिश्र के साहित्य में सामाजिक यथार्थ की प्रस्तुति, उसके स्रोत, प्रभाव और साहित्यिक शिल्प के माध्यम से उसकी प्रभावशीलता को उजागर करना है। निष्कर्षतः यह शोध यह स्थापित करता है कि गोविन्द मिश्र का साहित्य न केवल हिंदी कथा साहित्य की समृद्ध परंपरा में उल्लेखनीय योगदान है, बल्कि यह समकालीन सामाजिक चेतना और परिवर्तन की प्रक्रिया को भी प्रोत्साहित करता है।

प्रमुख शब्दावली (Keywords) – गोविन्द मिश्र, सामाजिक यथार्थ, हिंदी कथा साहित्य, मध्यवर्ग, स्त्री विमर्श, मूल्य-संकट, यथार्थवाद, आधुनिक समाज

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में जब हम सामाजिक यथार्थ की चर्चा करते हैं, तब गोविन्द मिश्र का नाम एक महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर के रूप में उभरकर सामने आता है। वे न केवल एक सजग साहित्यकार हैं, बल्कि समाज की गहन विसंगतियों, मूल्यों के संकट और संवेदनशील मानव संबंधों को अपने साहित्य में जीवंत रूप से प्रस्तुत करने वाले

कथाकार भी हैं। उनके साहित्य में सामाजिक जीवन के विविध पक्षों की गूढ़ पड़ताल मिलती है – जिसमें वर्ग भेद, स्त्री की स्थिति, पारिवारिक विघटन, आधुनिकता के प्रभाव, शहरी और ग्रामीण जीवन की आपसी टकराहट और भारतीय मध्यवर्गीय समाज की आकांक्षाएँ सम्मिलित हैं।

गोविन्द मिश्र के उपन्यास और कहानियाँ केवल जीवन की नकल नहीं हैं, बल्कि वे समाज के भीतर चल रहे सूक्ष्म और तीव्र अंतर्विरोधों को उद्घाटित करती हैं। वे अपने समय के यथार्थ को गहराई से देखने, समझने और उसे मानवीय संवेदना के धरातल पर प्रस्तुत करने का कार्य करते हैं। उनके यहाँ सामाजिक यथार्थ कोई निर्जीव वस्तु नहीं, बल्कि जीवंत सामाजिक अनुभव है, जो पाठक के भीतर एक नैतिक और संवेदनात्मक हलचल पैदा करता है।

इस शोधपत्र में गोविन्द मिश्र के साहित्य में निहित सामाजिक यथार्थ के स्वरूप, उसकी वैचारिक पृष्ठभूमि, रचनात्मक अभिव्यक्ति और उसकी समकालीन प्रासंगिकता का समग्र विश्लेषण किया गया है। उद्देश्य यह है कि उनके साहित्य के माध्यम से यह समझा जा सके कि किस प्रकार उन्होंने यथार्थ को केवल विषय नहीं, अपितु दृष्टि और साध्य के रूप में अपनाया।

उनकी रचनाएँ न केवल साहित्यिक रूप से समृद्ध हैं, बल्कि सामाजिक विमर्श को भी आगे बढ़ाने में सक्षम हैं। अतः यह अध्ययन गोविन्द मिश्र के साहित्य के बहुआयामी सामाजिक आयामों को उद्घाटित करने का एक प्रयास है।

सामाजिक यथार्थ का स्वरूप

सामाजिक यथार्थ साहित्य का वह आधार है जो जीवन के बहुआयामी पक्षों को यथासंभव वस्तुनिष्ठ रूप में प्रस्तुत करता है। यह यथार्थ केवल बाह्य घटनाओं या स्थितियों की पुनरावृत्ति नहीं है, बल्कि वह संवेदना है जो समाज में व्याप्त असमानताओं, विडंबनाओं, संघर्षों और मूल्य-संकटों को समझने और अभिव्यक्त करने का प्रयास करती है। गोविन्द मिश्र के साहित्य में यह यथार्थ बहुधा मध्यमवर्गीय जीवन के बहाने सामने आता है, जिसमें वे भारतीय समाज की बदलती चेतना, सांस्कृतिक संक्रमण और संबंधों के जटिल होते ताने-बाने को रेखांकित करते हैं।

गोविन्द मिश्र के उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ एक जीवंत अनुभूति बनकर उपस्थित होता है, जिसमें न तो आदर्शवाद की चाशनी होती है और न ही नकारात्मकता का अतिरेक। वे अपने पात्रों के माध्यम से समाज के भीतर चल रहे सतत संघर्ष को गहराई से रेखांकित करते हैं। उदाहरणतः, उपन्यास "*धीर समीर गंभीर*" में उन्होंने एक ऐसे मध्यवर्गीय व्यक्ति का चित्रण किया है जो आधुनिकता की चकाचौंध और पारंपरिक मूल्यों के बीच झूलता है, और भीतर से टूटता भी है।

गोविन्द मिश्र के कथा-साहित्य में सामाजिक यथार्थ का दूसरा प्रमुख पहलू है – **स्त्री का आत्मबोध और सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उसका संघर्ष**। उनके उपन्यास "*पार उतरने के बाद*" में नारी-जीवन की जटिलताओं, अस्मिता की खोज और आत्मनिर्णय की आकांक्षा को बड़े ही संवेदी और प्रामाणिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यह यथार्थ उस स्त्री का है, जो संबंधों के मोहजाल और सामाजिक बंधनों के बीच अपने आत्मत्व की खोज करती है।

इसी प्रकार, "*कोहरे में कैद रंग*" जैसे उपन्यास में वे नगरीकरण, पारिवारिक विघटन, पीढ़ी-संघर्ष और आर्थिक अस्थिरता जैसे विषयों को उठाते हैं। ये सब समकालीन भारतीय समाज की वास्तविक स्थितियाँ हैं, जिन्हें लेखक ने कलात्मक सच्चाई और अनुभवजन्य दृष्टि से चित्रित किया है।

गोविन्द मिश्र की भाषा, शिल्प और दृष्टिकोण – तीनों में सामाजिक यथार्थ की तीव्रता अनुभव की जा सकती है। वे अपने पात्रों को मात्र घटनाओं के वाहक नहीं बनाते, बल्कि उन्हें विचारशील, संशयग्रस्त, भावनाओं से जूझता हुआ मनुष्य बनाकर प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार, सामाजिक यथार्थ उनके साहित्य में केवल वर्णन नहीं, बल्कि विवेचन और संवेदना की धरती पर उतरता हुआ अनुभव है।

गोविन्द मिश्र के प्रमुख उपन्यासों में सामाजिक यथार्थ का विश्लेषण

गोविन्द मिश्र का उपन्यास-साहित्य भारतीय सामाजिक यथार्थ का अत्यंत संवेदनशील और बहुआयामी चित्र प्रस्तुत करता है। उनके कथा-संसार में समाज के विविध वर्गों, परिस्थितियों और मूल्य-संकटों को ईमानदारी और कलात्मक संतुलन के साथ उकेरा गया है। इस खंड में उनके कुछ प्रमुख उपन्यासों का विश्लेषण करते हुए सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति को समझने का प्रयास किया गया है।

- **धीर समीर गंभीर:** यह उपन्यास गोविन्द मिश्र की यथार्थवादी दृष्टि का प्रतिनिधि उदाहरण है। इसमें एक ऐसे मध्यमवर्गीय व्यक्ति का चित्रण है जो भारतीय समाज में बदलते मूल्यों, पेशागत असुरक्षा, पारिवारिक उलझनों और आंतरिक तनावों से जूझता है। नायक की मानसिक स्थितियाँ, सामाजिक द्वंद्व और आत्मसंघर्ष समकालीन शहरी जीवन की विडंबनाओं को उद्घाटित करते हैं। इस उपन्यास में मध्यवर्ग की जड़ता, आत्ममुग्धता और असहायता के यथार्थ को बारीकी से उभारा गया है।
- **कोहरे में कैद रंग:** यह उपन्यास सामाजिक संक्रमण के उस दौर को अभिव्यक्त करता है जहाँ पारंपरिक मूल्य और आधुनिकता आमने-सामने खड़े हैं। इसमें पारिवारिक विघटन, पीढ़ियों के बीच संवादहीनता, और सांस्कृतिक खोखलेपन को संवेदना के साथ उकेरा गया है। लेखक ने नगरीकरण और भूमंडलीकरण के प्रभाव को भी सूक्ष्मता से चित्रित किया है, जहाँ पात्रों की संवेदनाएँ धुंधलाती हैं, और जीवन की स्पष्टता 'कोहरे' में कैद हो जाती है।
- **पार उतरने के बाद:** इस उपन्यास में नारी चेतना और आत्मबोध की प्रक्रिया को सामाजिक परिप्रेक्ष्य में उकेरा गया है। महिला पात्रों के माध्यम से लेखक ने पारंपरिक स्त्री-भूमिकाओं से बाहर निकलने और स्वतंत्र व्यक्तित्व की तलाश करने वाली स्त्रियों की मानसिक-समाजशास्त्रीय यात्रा को चित्रित किया है। सामाजिक यथार्थ यहाँ स्त्री दृष्टि से पुनर्परिभाषित होता है, जहाँ विवाह, संबंध, मातृत्व और सामाजिक स्वीकृति जैसे पहलुओं पर गहन विमर्श मिलता है।
- **पाँच आंगनों वाला घर:** यह उपन्यास पारिवारिक संरचना के माध्यम से सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित करता है। इसमें संयुक्त परिवार, उसमें व्याप्त मूल्य-संघर्ष, पीढ़ीगत मतभेद और सामाजिक बदलावों का प्रभाव दर्शाया

गया है। यह उपन्यास ग्रामीण-शहरी द्वंद्व, संपत्ति-विवाद और स्त्री-पुरुष संबंधों के माध्यम से बदलते भारतीय समाज की छवि प्रस्तुत करता है।

- **लाल पीली ज़मीन:** इस उपन्यास में ग्रामीण यथार्थ को केंद्र में रखकर किसानों, दलितों, महिलाओं और स्थानीय सत्ता के बीच संबंधों का चित्रण किया गया है। यह उपन्यास सामाजिक अन्याय, भूख, अशिक्षा और राजनीतिक उपेक्षा जैसे प्रश्नों को साहित्यिक संवेदना से जोड़ता है। लेखक का दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से प्रगतिशील है, जो वंचितों की आवाज़ को स्वर देता है।

इन उपन्यासों के माध्यम से स्पष्ट होता है कि गोविन्द मिश्र का साहित्य किसी एकवर्णीय यथार्थ को नहीं, बल्कि बहुस्वरीय सामाजिक यथार्थ को स्वर देता है। वे न केवल समाज की समस्याओं को उजागर करते हैं, बल्कि उनमें छिपे परिवर्तन और संभावनाओं को भी रेखांकित करते हैं।

गोविन्द मिश्र की भाषा, शिल्प और दृष्टिकोण में यथार्थ की उपस्थिति

गोविन्द मिश्र का साहित्यिक योगदान केवल विषय-वस्तु तक सीमित नहीं है, बल्कि उनकी भाषा, रचना-शैली और दृष्टिकोण में भी सामाजिक यथार्थ का सशक्त प्रतिबिंब परिलक्षित होता है। उन्होंने न केवल जीवन के विविध पक्षों को उकेरा, बल्कि उसे प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने के लिए सुसंगत भाषिक उपकरणों और शिल्पगत प्रयोगों का सहारा लिया है। इस खंड में उनकी भाषा, शिल्प और दृष्टिकोण की विशेषताओं को यथार्थ के आलोक में देखा गया है।

- **भाषा की सहजता और संवेदना:** गोविन्द मिश्र की भाषा खड़ी बोली हिंदी पर आधारित है, जिसमें साहित्यिक परिष्कार के साथ-साथ जनसामान्य की बोलचाल की सहजता भी विद्यमान है। वे अनावश्यक क्लिष्टता से बचते हैं, और पात्रों के वर्ग तथा मनोविज्ञान के अनुसार भाषा का चयन करते हैं। यही कारण है कि उनका यथार्थ पाठक के अनुभव से गहराई से जुड़ता है। भावात्मक और वैचारिक अभिव्यक्ति में संतुलन उनकी भाषा की एक और विशेषता है।

  उदाहरणस्वरूप, '*कोहरे में कैद रंग* में नायक-नायिका के बीच संवादों में भाषा की सूक्ष्मता और वैचारिक परतें एक साथ देखी जा सकती हैं। पात्रों के मानसिक द्वंद्व और सामाजिक दबावों की अभिव्यक्ति में उनकी भाषा अत्यंत प्रभावी सिद्ध होती है।

- **शिल्पगत संरचना और कथानक की रचनात्मकता:** गोविन्द मिश्र के उपन्यासों में शिल्प अत्यंत सधे हुए रूप में प्रयुक्त होता है। वे बहुखंडी संरचना, आंतरिक एकालाप, फ्लैशबैक, और आत्मकथ्य शैली का प्रयोग करते हुए कथानक को गतिशील बनाते हैं। उनकी रचनाओं में एक ओर कथात्मक निरंतरता दिखाई देती है, वहीं दूसरी ओर मानसिक यथार्थ के चित्रण हेतु कथावृत्त की बहिर्मुखता और अंतर्मुखता के बीच संतुलन बनाए रखा गया है।

'*पाँच आंगनों वाला घर*' इसका स्पष्ट उदाहरण है, जहाँ एक परिवार की कथा अनेक दृष्टिकोणों से सामने आती है और पाठक स्वयं उस संरचना में सामाजिक अर्थों की तलाश करता है।

- **दृष्टिकोण की यथार्थवादी निर्माण:** गोविन्द मिश्र के रचनात्मक दृष्टिकोण में यथार्थ केवल समाज की छवि नहीं, बल्कि समाज के भीतर क्रियाशील शक्तियों और परिवर्तनों का प्रतिबिंब है। वे समस्या को केवल रेखांकित नहीं करते, अपितु उसके अंतर्संबंधों की परतों को उद्घाटित करते हैं। उनका दृष्टिकोण आलोचनात्मक होते हुए भी अराजक नहीं है — वह मानवीय है, परिवर्तनकामी है, और संवेदनशील भी।
  उनका यथार्थ दलित, स्त्री, किसान, श्रमिक, मध्यवर्ग और बुर्जुआ समाज — सभी को समेटते हुए जटिल सामाजिक संरचना का रचनात्मक पाठ प्रस्तुत करता है। 'लाल पीली ज़मीन' में यह दृष्टिकोण विशेष रूप से स्पष्ट होता है जहाँ ग्रामीण समाज की विसंगतियाँ एक सजग दृष्टि से उजागर की गई हैं।
- **प्रतीकात्मकता और बिंब विधान:** यथार्थ को गहराई देने हेतु गोविन्द मिश्र ने प्रतीकों और बिंबों का कलात्मक प्रयोग किया है। 'कोहरा', 'दरार', 'घर', 'ज़मीन', 'खिड़की', 'रास्ता' आदि प्रतीक उनके साहित्य में बार-बार आते हैं और बहुस्तरीय अर्थवत्ता को जन्म देते हैं। इससे उनका यथार्थ अधिक सघन और व्याख्यायोग्य बनता है।

गोविन्द मिश्र की भाषा की सादगी, शिल्प की परिपक्वता और दृष्टिकोण की मानवीयता — इन सभी में सामाजिक यथार्थ एक गहरे अनुभव और प्रतिबद्धता के साथ अभिव्यक्त होता है। वे न तो यथार्थ से भागते हैं, न ही उसे एकरेखीय रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनका साहित्य भारतीय समाज के विविध रंगों को संवेदना और विश्लेषण की गहराई के साथ चित्रित करता है।

गोविन्द मिश्र के साहित्य की प्रासंगिकता और समकालीन विमर्शों से संबद्धता

गोविन्द मिश्र का साहित्य अपने समय की सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जटिलताओं को न केवल उजागर करता है, बल्कि उन पर एक विवेकशील और संवेदनशील दृष्टिकोण से विचार भी करता है। उनके लेखन की यही विशेषता उन्हें आज के समकालीन विमर्शों — जैसे दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, वर्ग चेतना, ग्रामीण यथार्थ और नागरिक अस्मिता — से जोड़ती है।

- **स्त्री विमर्श के सापेक्ष:** गोविन्द मिश्र के उपन्यासों में स्त्री-पात्र केवल पारंपरिक भूमिकाओं में नहीं, बल्कि वे अपने आत्मबोध, स्वतंत्रता और अस्तित्व की तलाश में सक्रिय रूप से संलग्न दिखाई देती हैं।
  '*कोहरे में कैद रंग* और '*धुंधभरे मैदान के उस पार*' में स्त्रियों की मानसिक द्वंद्वात्मकता, आत्मसंघर्ष और सामाजिक दबावों के बीच उनकी आत्मनिर्भरता को गहराई से रेखांकित किया गया है।
  स्त्री विमर्श के व्यापक प्रश्न — जैसे विवाह संस्था, यौनिकता, मातृत्व, आत्म-निर्णय की स्वतंत्रता — पर उनका दृष्टिकोण संवेदनशील, आलोचनात्मक और परिवर्तनकामी है।

- **दलित और हाशिए के समुदाय:** यद्यपि गोविन्द मिश्र का साहित्य विशुद्ध रूप से दलित विमर्श का प्रतिनिधि नहीं कहा जा सकता, लेकिन उनके उपन्यासों में सामाजिक अन्याय, वर्गभेद और उत्पीड़न के चित्रण के माध्यम से हाशिए पर खड़े वर्गों की पीड़ा को आवाज़ मिलती है।
  '*लाल पीली ज़मीन* और '*आँखों देखी झूठ*' जैसे उपन्यासों में किसान, मज़दूर, निम्नवर्गीय पात्र समाज की उस संरचना का प्रतिनिधित्व करते हैं जो सदियों से सत्ता और संसाधनों से वंचित रही है।
- **वर्ग चेतना और मध्यमवर्गीय संघर्ष:** गोविन्द मिश्र का सबसे मजबूत पक्ष यह है कि वे भारतीय मध्यमवर्ग की मानसिक संरचना, उसके मोहभंग, व्यावसायिक जीवन की जटिलता, नौकरशाही के अंतर्विरोध, और पारिवारिक-सामाजिक द्वंद्वों को यथार्थवादी ढंग से चित्रित करते हैं।
  '*पाँच आंगनों वाला घर*' में पारंपरिक संयुक्त परिवार के विघटन और नव-उदारवादी जीवन शैली के संघर्ष को अत्यंत सूक्ष्मता से प्रस्तुत किया गया है।
- **ग्रामीण यथार्थ और भूमि चेतना:** गोविन्द मिश्र के लेखन में भारतीय ग्राम्य जीवन की गंध है। उनका 'गाँव' केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि एक जीवित सामाजिक संरचना है जिसमें परंपरा और परिवर्तन की निरंतर लड़ाई चलती रहती है।
  '*लाल पीली ज़मीन* में भूमि का सवाल, किसानों की बदलती मानसिकता और कृषक जीवन की टूटती व्यवस्था एक सशक्त विमर्श के रूप में उपस्थित है।
- **वैश्वीकरण और सांस्कृतिक संक्रमण:** आधुनिकता, शहरीकरण और भूमंडलीकरण के संदर्भ में गोविन्द मिश्र का साहित्य सांस्कृतिक संक्रमण, मूल्य-संकट और व्यक्ति के अलगाव को भी चित्रित करता है। '*शब्दों से परे*' और '*धुंधभरे मैदान...*' में इस बदलाव को गहराई से अनुभव किया जा सकता है। यह संक्रमण सामाजिक यथार्थ को और जटिल बनाता है जिसे वे अत्यंत संतुलन के साथ प्रस्तुत करते हैं।

गोविन्द मिश्र का साहित्य समकालीन भारतीय समाज के उन सभी बुनियादी प्रश्नों को उठाता है जो आज भी हमारे जीवन और सोच को प्रभावित करते हैं। उनके यथार्थबोध में केवल चित्रण नहीं, बल्कि विचार की वह अंतर्धारा है जो उन्हें न केवल एक कुशल कथाकार, बल्कि एक सामाजिक चिंतक के रूप में भी प्रतिष्ठित करती है। वर्तमान में जब साहित्य पुनर्पाठ, पुनराविष्कार और विमर्श के केंद्र में है, गोविन्द मिश्र की रचनाएँ अत्यंत प्रासंगिक, सशक्त और प्रेरणादायक बनकर सामने आती हैं।

निष्कर्ष

गोविन्द मिश्र हिंदी कथा-साहित्य के ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने अपने उपन्यासों, कहानियों और निबंधों के माध्यम से समाज के यथार्थ को एक सूक्ष्म और बहुआयामी दृष्टिकोण से उद्घाटित किया है। उनका साहित्य न तो मात्र सामाजिक

चित्रण तक सीमित है और न ही केवल विचारों का उद्घोष—बल्कि यह जीवन के जटिल अनुभवों, द्वंद्वों और मूल्यों के बीच व्यक्ति की तलाश, संघर्ष और चेतना का सजीव दस्तावेज है।

गोविन्द मिश्र के साहित्य में भारतीय मध्यमवर्ग का मानसिक संघर्ष, ग्राम्य जीवन की विडंबनाएँ, स्त्री चेतना, सांस्कृतिक संक्रमण, तथा वर्गीय अंतर्विरोधों को अत्यंत संवेदनशील और यथार्थपरक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। उनकी रचनाएँ समाज में विद्यमान आर्थिक असमानता, पारिवारिक संरचना के विघटन, नैतिक मूल्यों के क्षरण और बदलते जीवन मूल्यों की पहचान कराती हैं।

उनका साहित्य यह प्रमाणित करता है कि सामाजिक यथार्थ कोई स्थिर अवधारणा नहीं, बल्कि सतत परिवर्तनशील, गतिशील और वैचारिक प्रक्रिया है, जिसे केवल संवेदनशील रचनाकार ही पकड़ सकता है। गोविन्द मिश्र की रचनात्मकता इसी जटिल यथार्थ को विश्वसनीय साहित्यिक संवेदना में ढालती है।

इस शोध के माध्यम से यह निष्कर्ष निकलता है कि गोविन्द मिश्र का साहित्य न केवल बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और इक्कीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों का दस्तावेज़ है, बल्कि वह समकालीन हिंदी साहित्य में सामाजिक यथार्थ के सबसे सशक्त स्वरूपों में से एक के रूप में स्थायी महत्व रखता है।

उनका लेखन हिंदी साहित्य की उस परंपरा का संवाहक है जिसमें साहित्य, समाज और चेतना का अंतर्संबंध स्पष्ट होता है और जो पाठक को न केवल सोचने के लिए प्रेरित करता है, बल्कि समाज को बेहतर बनाने की आकांक्षा से भी भर देता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. मिश्र, गोविन्द, *अहेर*, कोलकाता: सार्थक प्रकाशन, 1995।
2. मिश्र, गोविन्द, *कई चाँद थे सरे-आसमान*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2005।
3. मिश्र, गोविन्द, *लौटती नहीं जो सुबह*, दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, 2015।
4. त्रिपाठी, रामजी, *समकालीन हिंदी उपन्यास और सामाजिक यथार्थ*, इलाहाबाद: साहित्य संस्थान, 2008।
5. मिश्र, रवींद्र, *गोविन्द मिश्र का कथा साहित्य: एक आलोचनात्मक अध्ययन*, वाराणसी: शोध संस्थान, 2017।
6. सिंह, रमाशंकर, *हिंदी उपन्यास का यथार्थबोध*, दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2012।
7. वर्मा, नरेन्द्र, *समकालीन हिंदी साहित्य का समाजशास्त्र*, भोपाल: साहित्य अकादमी, 2009।
8. कुमार, संजय, *सामाजिक यथार्थ और हिंदी उपन्यास*, पटना: गंगा पुस्तकालय, 2014।
9. मिश्र, गोविन्द, *धीर समान चुप*, नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ, 2004।
10. मिश्र, गोविन्द, *पार जल में*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2010।